संविधान की व्याख्या के लिए उच्चतम न्यायालय का लचीला दृष्टिकोण

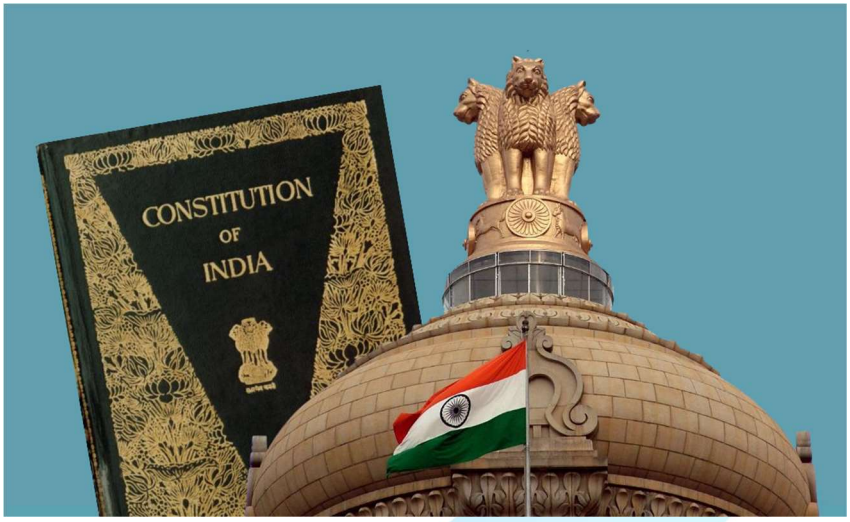

हाल ही में उच्चतम न्यायालय के पांच न्यायाधीशों की पीठ के एक फैसले ने इस सार्वभौमिक बहस पर प्रकाश डाला है कि देश के संविधान की व्याख्या कैसे की जानी चाहिए। एक सिद्धांत वह है, जो संविधान के प्रारूपकारों की व्याख्या से चिपके रहने की वकालत करता है। दूसरा पक्ष, इसे एक जीवित संविधान के रूप में देखना चाहता है, जिसमें इसकी व्याख्या समाज के परिवर्तन के अनुकूल होती रहे।

उच्चतम न्यायालय का पक्ष -

अपने हाल के निर्णय में न्यायालय ने एक धार्मिक समुदाय के अनुयायियों को बहिष्कृत करने की रिट याचिका पर विचार करते हुए जीवित संविधान के पक्ष में अपना झुकाव दिखाया है।

न्यायाधीशों की पीठ ने अपना पक्ष रखते हुए कहा है कि स्वतंत्रता का विचार स्थिर नहीं है। इसलिए बदलते सामाजिक रीति-रिवाजों के साथ तालमेल बैठाने के लिए न्यायिक व्याख्या को बदला जाना चाहिए।

पिछले पांच दशकों के महत्वपूर्ण निर्णय -

- 1973 का केशवानंद भारती मामला। इस मामले ने संविधान के बुनियादी संरचना सिद्धांत की स्थापना की। इसने सुनिश्चित किया कि संसदीय बहुमत को संविधान में ऐसे किसी संशोधन का अधिकार नहीं है, जो इसके सार को कमजोर करता है।

- कुछ समय बाद विशाखा मामले में कार्यस्थल में होने वाले यौन शोषण को रोकने के लिए फैसला दिया गया। न्यायालय ने विधायिका से एक कदम आगे बढ़कर सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन की पहल की।

- 2010 में, रिलायंस इंडस्ट्रीज से जुड़े एक अन्य मामले में न्यायालय ने स्पष्ट कहा कि प्राकृतिक संसाधनों पर बने हुए सरकारी नियंत्रण ने निजी समझौतों की अवहेलना की है।

- 2017 में नौ न्यायाधीशों की बेंच ने निजता के अधिकार को मौलिक मानते हुए सर्वसम्मति से फैसला सुनाया।

इस प्रकार, ऐसे बहुत से निर्णय दिए गए हैं, जो समाज में हुए परिवर्तनों से प्रेरित रहे हैं। अमेरिका में संविधान की मौलिकता को बचाए रखने की जड़ता की तुलना में, भारतीय न्यायालय के ये निर्णय कहीं बेहतर कहे जा सकते हैं।

मील का पत्थर बने ये निर्णय, संवैधानिक सिद्वांतों को समझने और लागू करने के तरीके में विधायिका और कार्यकारिणी को व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाने की समझ देते हैं। और व्यक्तिगत अधिकारों की रक्षा करते हैं।

'द टाइम्स ऑफ इंडिया' में प्रकाशित संपादकीय पर आधारित। 13 फरवरी, 2023

AFEIAS